

## श्री रामजी का विलाप, जटायु का प्रसंग, कबन्ध उद्धार

\*\*\* जेहि बिधि कपट कुरंग सँग धाड़ चले श्रीराम। सो छबि सीता राखि उर रटति रहति हरिनाम॥29 ख॥

भावार्थ:- जिस प्रकार कपट मृग के साथ श्री रामजी दौड़ चले थे, उसी छवि को हृदय में रखकर वे हरिनाम (रामनाम) रटती रहती हैं॥29 (ख)॥

चौपाई :

\*\*\* रघुपति अनुजहि आवत देखी। बाहिज चिंता कीन्हि बिसेषी॥ जनकसुता परिहरिहु अकेली। आयहु तात बचन मम पेली॥॥

भावार्थ:- (इधर) श्री रघुनाथजी ने छोटे भाई लक्ष्मणजी को आते देखकर ब्राह्म्य रूप में बहुत चिंता की (और कहा-) हे भाई! तुमने जानकी को अकेली छोड़ दिया और मेरी आज्ञा का उल्लंघन कर यहाँ चले आए॥॥1॥

\*\*\* निसिचर निकर फिरहिं बन माहीं। मम मन सीता आश्रम नाहीं॥ गहि पद कमल अनुज कर जोरी। कहेउ नाथ कछु मोहि न खोरी॥2॥

भावार्थ:- राक्षसों के झुंड वन में फिरते रहते हैं। मेरे मन में ऐसा आता है कि सीता आश्रम में नहीं है। छोटे भाई लक्ष्मणजी ने श्री रामजी के चरणकमलों को पकड़कर हाथ जोड़कर कहा- हे नाथ! मेरा कुछ भी दोष नहीं है॥2॥

\*\*\* अनुज समेत गए प्रभु तहवाँ। गोदावरि तट आश्रम जहवाँ॥ आश्रम देखि जानकी हीना। भए बिकल जस प्राकृत दीना॥3॥

भावार्थ:- लक्ष्मणजी सहित प्रभु श्री रामजी वहाँ गए, जहाँ गोदावरी के तट पर उनका आश्रम था। आश्रम को जानकीजी से रहित देखकर श्री रामजी साधारण मनुष्य की भाँति व्याकुल और दीन (दुःखी) हो गए॥3॥

\*\*\* हा गुन खानि जानकी सीता। रूप सील ब्रत नेम पुनीता॥ लछिमन समुझाए बहु भाँति। पूछत चले लता तरु पाँती॥4॥

भावार्थ:- (वे विलाप करने लगे-) हा गुणों की खान जानकी! हा रूप, शील, व्रत और नियमों में पवित्र सीते! लक्ष्मणजी ने बहुत प्रकार से समझाया। तब श्री रामजी लताओं और वृक्षों की पंक्तियों से पूछते हुए चले॥॥4॥

\*\*\* हे खग मृग हे मधुकर श्रेणी। तुम्ह देखी सीता मृगनैनी॥ खंजन सुक कपोत मृग मीना। मधुप निकर कोकिला प्रबीना॥5॥

भावार्थ:- हे पक्षियों! हे पशुओं! हे भौरों की पंक्तियों! तुमने कहीं मृगनयनी सीता को देखा है? खंजन, तोता, कबूतर, हिरन, मछली, भौरों का समूह, प्रवीण कोयल,॥5॥

\*\*\* कुंद कली दाड़िम दामिनी। कमल सरद ससि अहिभामिनी॥ बरुन पास मनोज धनु हंसा। गज केहरि निज सुनत प्रसंसा॥6॥

भावार्थ:- कुन्दकली, अनार, बिजली, कमल, शरद् का चंद्रमा और नागिनी, अरुण का पाश, कामदेव का धनुष, हंस, गज और सिंह- ये सब आज अपनी प्रशंसा सुन रहे हैं॥6॥

\*\*\* श्री फल कनक कदलि हरषाहीं। नेकु न संक सकुच मन माहीं॥ सुनु जानकी तोहि बिनु आजू। हरषे सकल पाइ जनु राजू॥7॥

भावार्थ:- बेल, सुवर्ण और केला हर्षित हो रहे हैं। इनके मन में जरा भी शंका और संकोच नहीं है। हे जानकी! सुनो, तुम्हारे बिना ये सब आज ऐसे हर्षित हैं, मानो राज पा गए हों। (अर्थात् तुम्हारे अंगों के सामने ये सब तुच्छ, अपमानित और लज्जित थे। आज तुम्हें न देखकर ये अपनी शोभा के अभिमान में फूल रहे हैं)॥7॥

\*\*\* किमि सहि जात अनख तोहि पाहीं। प्रिया बेगि प्रगटसि कस नाहीं॥ एहि बिधि खोजत बिलपत स्वामी। मनहुँ महा बिरही अति कामी॥8॥

भावार्थ:- तुमसे यह अनख (स्पर्धा) कैसे सही जाती है? हे प्रिये! तुम शीघ्र ही प्रकट क्यों नहीं होती? इस प्रकार (अनन्त ब्रह्माण्डों के अथवा महामहिमामयी स्वरूपाशक्ति श्री सीताजी के) स्वामी श्री रामजी सीताजी को खोजते हुए (इस प्रकार) विलाप करते हैं, मानो कोई महाविरही और अत्यंत कामी पुरुष हो॥8॥

\*\*\* पूरकनाम राम सुख रासी। मनुजचरित कर अज अबिनासी॥ आगें परा गीधपति देखा। सुमिरत राम चरन जिन्ह रेखा॥9॥

भावार्थ:- पूर्णकाम, आनंद की राशि, अजन्मा और अविनाशी श्री रामजी मनुष्यों के चरित्र कर रहे हैं। आगे (जाने पर) उन्होंने गृध्रपति जटायु को पड़ा देखा। वह श्री रामजी के चरणों का स्मरण कर रहा था, जिनमें (ध्वजा, कुलिश आदि की) रेखाएँ (चिह्न) हैं॥9॥

दोहा :

\*\*\* कर सरोज सिर परसेउ कृपासिंधु रघुबीर। निरखि राम छबि धाम मुख बिगत भई सब पीर॥30॥

भावार्थ:- कृपा सागर श्री रघुवीर ने अपने करकमल से उसके सिर का स्पर्श किया (उसके सिर पर करकमल फेर दिया)। शोभाधाम श्री रामजी का (परम सुंदर) मुख देखकर उसकी सब पीड़ा जाती रही॥30॥

चौपाई :

\*\*\* तब कह गीध बचन धरि धीरा। सुनहु राम भंजन भव भीरा॥ नाथ दसानन यह गति कीन्ही। तेहिं खल जनकसुता हरि लीन्ही॥1॥

भावार्थ:- तब धीरज धरकर गीध ने यह वचन कहा- हे भव (जन्म-मृत्यु) के भय का नाश करने वाले श्री रामजी! सुनिए। हे नाथ! रावण ने मेरी यह दशा की है। उसी दुष्ट ने जानकीजी को हर

लिया है॥1॥

\*\*\* लै दच्छिन दिसि गयउ गोसाईं। बिलपति अति कुररी की नाई॥ दरस लाग प्रभु राखेउँ प्राना।  
चलन चहत अब कृपानिधाना॥2॥

भावार्थ:- हे गोसाईं! वह उन्हें लेकर दक्षिण दिशा को गया है। सीताजी कुररी (कुर्ज) की तरह अत्यंत विलाप कर रही थीं। हे प्रभो! आपके दर्शनों के लिए ही प्राण रोक रखे थे। हे कृपानिधान! अब ये चलना ही चाहते हैं॥2॥

\*\*\* राम कहा तनु राखहु ताता। मुख मुसुकाइ कही तेहिं बाता॥ जाकर नाम मरत मुख आवा।  
अधमउ मुकुत होइ श्रुति गावा॥3॥

भावार्थ:- श्री रामचंद्रजी ने कहा- हे तात! शरीर को बनाए रखिए। तब उसने मुस्कराते हुए मुँह से यह बात कही- मरते समय जिनका नाम मुख में आ जाने से अधम (महान् पापी) भी मुक्त हो जाता है, ऐसा वेद गाते हैं-॥3॥

\*\*\* सो मम लोचन गोचर आगें। राखीं देह नाथ केहि खाँगें॥ जल भरि नयन कहहिं रघुराई। तात  
कर्म निज तें गति पाई॥4॥

भावार्थ:- वही (आप) मेरे नेत्रों के विषय होकर सामने खड़े हैं। हे नाथ! अब मैं किस कमी (की पूर्ति) के लिए देह को रखूँ? नेत्रों में जल भरकर श्री रघुनाथजी कहने लगे- हे तात! आपने अपने श्रेष्ठ कर्मों से (दुर्लभ) गति पाई है॥4॥

\*\*\* परहित बस जिन्ह के मन माहीं। तिन्ह कहूँ जग दुर्लभ कछु नाहीं॥ तनु तिज तात जाहु मम  
धामा। देउँ काह तुम्ह पूरनकामा॥5॥

भावार्थ:- जिनके मन में दूसरे का हित बसता है (समाया रहता है), उनके लिए जगत् में कुछ भी (कोई भी गति) दुर्लभ नहीं है। हे तात! शरीर छोड़कर आप मेरे परम धाम में जाइए। मैं आपको क्या दूँ? आप तो पूर्णकाम हैं (सब कुछ पा चुके हैं)॥5॥

दोहा :

\*\*\* सीता हरन तात जनि कहहु पिता सन जाइ। जौं मैं राम त कुल सहित कहिहि दसानन  
आइ॥31॥

भावार्थ:- हे तात! सीता हरण की बात आप जाकर पिताजी से न कहिएगा। यदि मैं राम हूँ तो दशमुख रावण कुटुम्ब सहित वहाँ आकर स्वयं ही कहेगा॥31॥

चौपाई :

\*\*\* गीध देह तजि धरि हरि रूपा। भूषण बहु पट पीत अनूपा॥ स्याम गात बिसाल भुज चारी।  
अस्तुति करत नयन भरि बारी॥1॥

भावार्थ:- जटायु ने गीध की देह त्यागकर हरि का रूप धारण किया और बहुत से अनुपम (दिव्य) आभूषण और (दिव्य) पीताम्बर पहन लिए। श्याम शरीर है, विशाल चार भुजाएँ हैं और नेत्रों में (प्रेम तथा आनंद के आँसुओं का) जल भरकर वह स्तुति कर रहा है-॥1॥ छंद :

\*\*\* जय राम रूप अनूप निर्गुन सगुन गुनप्रेरक सही। दससीस बाहु प्रचंड खंडन चंड सर मंडन मही॥ पाथोद गात सरोज मुखराजीव आयत लोचनं। नित नौमि रामु कृपाल बाहु बिसाल भव भय मोचनं॥1॥

भावार्थ:- हे रामजी! आपकी जय हो। आपका रूप अनुपम है, आप निर्गुण हैं, सगुण हैं और सत्य ही गुणों के (माया के) प्रेरक हैं। दस सिर वाले रावण की प्रचण्ड भुजाओं को खंड-खंड करने के लिए प्रचण्ड बाण धारण करने वाले, पृथ्वी को सुशोभित करने वाले, जलयुक्त मेघ के समान श्याम शरीर वाले, कमल के समान मुख और (लाल) कमल के समान विशाल नेत्रों वाले, विशाल भुजाओं वाले और भव-भय से छुड़ाने वाले कृपालु श्री रामजी को मैं नित्य नमस्कार करता हूँ॥

\*\*\* बलमप्रमेयमनादिमजमव्यक्तमेकमगोचरं। गोबिंद गोपर द्वंद्वहर बिग्यानघन धरनीधरं॥ जे राम मंत्र जपंत संत अनंत जन मन रंजनं। नित नौमि राम अकाम प्रिय कामादि खल दल गंजनं॥2॥

भावार्थ:- आप अपरिमित बलवाले हैं, अनादि, अजन्मा, अव्यक्त (निराकार), एक अगोचर (अलक्ष्य), गोविंद (वेद वाक्यों द्वारा जानने योग्य), इंद्रियों से अतीत, (जन्म-मरण, सुख-दुःख, हर्ष-शोकादि) द्वंद्वों को हरने वाले, विज्ञान की घनमूर्ति और पृथ्वी के आधार हैं तथा जो संत राम मंत्र को जपते हैं, उन अनन्त सेवकों के मन को आनंद देने वाले हैं। उन निष्कामप्रिय (निष्कामजनों के प्रेमी अथवा उन्हें प्रिय) तथा काम आदि दुष्टों (दुष्ट वृत्तियों) के दल का दलन करने वाले श्री रामजी को मैं नित्य नमस्कार करता हूँ॥2॥

\*\*\* जेहि श्रुति निरंजन ब्रह्म व्यापक बिरज अज कहि गावहीं। करि ध्यान ग्यान बिराग जोग अनेक मुनि जेहि पावहीं॥ सो प्रगट करुना कंद सोभा बृंद अग जग मोहई। मम हृदय पंकज भृंग अंग अनंग बहु छबि सोहई॥3॥

भावार्थ:- जिनको श्रुतियाँ निरंजन (माया से परे), ब्रह्म, व्यापक, निर्विकार और जन्मरहित कहकर गान करती हैं। मुनि जिन्हें ध्यान, ज्ञान, वैराग्य और योग आदि अनेक साधन करके पाते हैं। वे ही करुणाकन्द, शोभा के समूह (स्वयं श्री भगवान्) प्रकट होकर जड़-चेतन समस्त जगत् को मोहित कर रहे हैं। मेरे हृदय कमल के भ्रमर रूप उनके अंग-अंग में बहुत से कामदेवों की छवि शोभा पा रही है॥3॥

\*\*\* जो अगम सुगम सुभाव निर्मल असम सम सीतल सदा। पस्यंति जं जोगी जतन करि करत मन गो बस सदा॥ सो राम रमा निवास संतत दास बस त्रिभुवन धनी। मम उर बसउ सो समन संसृति जासु कीरति पावनी॥4॥

भावार्थ:- जो अगम और सुगम हैं, निर्मल स्वभाव हैं, विषम और सम हैं और सदा शीतल (शांत) हैं। मन और इंद्रियों को सदा वश में करते हुए योगी बहुत साधन करने पर जिन्हें देख पाते हैं। वे तीनों लोकों के स्वामी, रमानिवास श्री रामजी निरंतर अपने दासों के वश में रहते हैं। वे ही मेरे हृदय में निवास करें, जिनकी पवित्र कीर्ति आवागमन को मिटाने वाली है॥4॥

दोहा :

\*\*\* अबिरल भगति मागि बर गीध गयउ हरिधाम। तेहि की क्रिया जथोचित निज कर कीन्ही राम॥32॥

भावार्थ:- अखंड भक्ति का वर माँगकर गृध्रराज जटायु श्री हरि के परमधाम को चला गया। श्री रामचंद्रजी ने उसकी (दाहकर्म आदि सारी) क्रियाएँ यथायोग्य अपने हाथों से कीं॥32॥

चौपाई :

\*\*\* कोमल चित अति दीनदयाला। कारन बिनु रघुनाथ कृपाला॥ गीध अध्म खग आमिष भोगी। गति दीन्ही जो जाचत जोगी॥1॥

भावार्थ:- श्री रघुनाथजी अत्यंत कोमल चित्त वाले, दीनदयालु और बिना ही करण कृपालु हैं। गीध (पक्षियों में भी) अधम पक्षी और मांसाहारी था, उसको भी वह दुर्लभ गति दी, जिसे योगीजन माँगते रहते हैं॥1॥

\*\*\* सुनहू उमा ते लोग अभागी। हरि तजि होहिं बिषय अनुरागी। पुनि सीतहि खोजत द्वौ भाई। चले बिलोकत बन बहु ताई॥2॥

भावार्थ:- (शिवजी कहते हैं-) हे पार्वती! सुनो, वे लोग अभागे हैं, जो भगवान् को छोड़कर विषयों से अनुराग करते हैं। फिर दोनों भाई सीताजी को खोजते हुए आगेचले। वे वन की सघनता देखते जाते हैं॥2॥

\*\*\* संकुल लता बिटप घन कानन। बहु खग मृग तहँ गज पंचानन॥ आवत पंथ कबंध निपाता। तेहिं सब कही साप कै बाता॥3॥

भावार्थ:- वह सघन वन लताओं और वृक्षों से भरा है। उसमें बहुत से पक्षी, मृग, हाथी और सिंह रहते हैं। श्री रामजी ने रास्ते में आते हुए कबंध राक्षस को मार डाला। उसने अपने शाप की सारी बात कही॥3॥

\*\*\* दुरबासा मोहि दीन्ही सापा। प्रभु पद पेखि मिटा सो पापा॥ सुनु गंधर्ब कहउँ मैं तोही। मोहि न सोहाइ ब्रह्मकुल द्रोही॥4॥

भावार्थ:- (वह बोला-) दुर्वासाजी ने मुझे शाप दिया था। अब प्रभु के चरणों को देखने से वह पाप मिट गया। (श्री रामजी ने कहा-) हे गंधर्व! सुनो, मैं तुम्हें कहता हूँ, ब्राह्मणकुल से द्रोह करने वाला मुझे नहीं सुहाता॥4॥

दोहा :

\*\*\* मन क्रम बचन कपट तजि जो कर भूसुर सेव। मोहि समेत बिरंचि सिव बस ताकें सब देव॥33॥

भावार्थ:- मन, वचन और कर्म से कपट छोड़कर जो भूदेव ब्राह्मणों की सेवा करता है, मुझ समेत ब्रह्मा, शिव आदि सब देवता उसके वश हो जाते हैं॥33॥

चौपाई :

\*\*\* सापत ताडत परुष कहंता। बिप्र पूज्य अस गावहिं संता॥ पूजिअ बिप्र सील गुन हीना। सूद्र न गुन गन ग्यान प्रबीना॥1॥

भावार्थ:- शाप देता हुआ मारता हुआ और कठोर वचन कहता हुआ भी ब्राह्मण पूजनीय है ऐसा संत कहते हैं। शील और गुण से हीन भी ब्राह्मण पूजनीय है। और गुण गणों से युक्त और ज्ञान में निपुण भी शूद्र पूजनीय नहीं है॥1॥

\*\*\* कहि निज धर्म ताहि समुझावा। निज पद प्रीति देखि मन भावा॥ रघुपति चरन कमल सिरु नाई। गयउ गगन आपनि गति पाई॥2॥

भावार्थ:- श्री रामजी ने अपना धर्म (भागवत धर्म) कहकर उसे समझाया। अपने चरणों में प्रेम देखकर वह उनके मन को भाया। तदनन्तर श्री रघुनाथजी के चरणकमलों में सिर नवाकर वह अपनी गति (गंधर्व का स्वरूप) पाकर आकाश में चला गया॥2॥